IInd P.G. semester

①

Globalisation of Indian Economy

Dr Kumari Manju
H.O.D.

वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ है विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ जाना। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से वैश्वीकरण होता है। भारतीय संदर्भ में इसका अर्थ है विदेशी कंपनियों को भारत की विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में निवेश करने की अनुमति देना, अर्थव्यवस्था को विदेशी निवेश के लिए खोलना, विदेशी विनिमय नियंत्रण अधिनियम और कानूनों को धीरे-धीरे समाप्त करके बहुराष्ट्रीय निगमों को देश में आने व निवेश करने की सुविधाएं प्रदान करना। भारतीय कंपनियों को विदेशी कंपनियों के साथ सहयोग करने की अनुमति देना तथा दूसरे देशों में संयुक्त परियोजनाएँ चालू करने के लिए प्रोत्साहित करना, मात्रात्मक प्रतिबंधों के स्थान पर धीरे-धीरे प्रशुल्कों को प्रतिस्थापित करना और फिर धीरे-धीरे उनको भी कम करना जिससे आयात उदारीकरण कार्यक्रमों को व्यापक आधार पर लागू किया जा सके, तथा कई तरह के निर्यात प्रोत्साहनों के स्थान पर विनिमय दर में परिवर्तनों द्वारा निर्यातों को प्रोत्साहित करना।

भूमंडलीकरण की दिशा में भारत सरकार ने 1980 के दशक के आरम्भ में ही प्रयास करना शुरू कर दिया था। इसके तहत विदेशी पूंजी को बहुत सी रियायतें दी गईं, बहुत से क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय निगमों को प्रवेश करने की अनुमति दी गई जिनमें उन्हें पहले काम करने की अनुमति दी गई जिनमें उन्हें पहले काम करने की अनुमति नहीं थी, विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम को कड़ाई से लागू नहीं किया, आयात उदारीकरण की प्रक्रिया को तेज किया गया, तथा विनिमय दर में लगातार मूल्य ह्रास (depreciation) द्वारा निर्यातों को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया गया। परन्तु भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में तेजी भारत सरकार द्वारा जुलाई 1991 में लागू की गई नई आर्थिक नीति के परिणामस्वरूप आई जो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक के दबाव के कारण अपनाई गई थी। यही कारण है कि आजकल के आर्थिक विवेचन में भूमंडलीकरण को जुलाई 1991 में अपनाई गई आर्थिक नीति और उसके बाद के वर्षों में अपनाई गई उदारीकरण की नीतियों के साथ जोड़ा जाता है।

भूमंडलीकरण के लिए दबाव (The push towards Globalisation): 1990-91 की खाड़ी संकट की स्थिति गंभीर हो गई। इस वर्ष 16,934 करोड़ रुपये का व्यापार घाटा हुआ। शुद्ध मदों से आय भी ऋणात्मक थी। इसके परिणामस्वरूप, 1990-91 में चालू खाते में 17,369 करोड़ रुपये का भारी घाटा हुआ। 1990-91 में भुगतान शेष में भारी घाटा हुआ जिससे कुछ विश्व संस्थाओं ने भारत साख मान (credit rating) को गिरा दिया जिससे विदेशी निवेशकों के भारतीय अर्थव्यवस्था में विश्वास को धक्का लगा। देश में व्याप्त राजनैतिक अस्थिरता ने समस्या को और गंभीर रूप दिया। इन बातों का परिणाम यह हुआ कि विदेशी निवेशकों ने बड़ी मात्रा में अपनी पूंजी को भारत से निकालना शुरू कर दिया। जनवरी 1991 में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से 1,800 मिलियन डालर की सहायता लेने के बावजूद, आयातों पर कठोर नियंत्रण लगाने के बावजूद, आयातों पर कठोर नियंत्रण लगाने के बावजूद संकट से बावजूद तथा विदेशी बैंकों में स्वर्ण गिरवी रखने के बावजूद संकट से बचा नहीं जा सका। 1991 के आते-आते विदेशी मुद्रा के भंडार 1,100 मिलियन डालर रह गए। ऐसा लगने लगा कि भारत अपनी ऋण सेवा सम्बन्धी दायित्वों को भी नहीं निभा पायेगा।

भारत पर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक का

Scanned with CamScanner

दबाव के कारण 1991 में स्थायित्व एवं संरचनात्मक कार्यक्रम लागू किया निम्न तीन बिंदु थे।

(I) स्थायित्व जिसका अर्थ यह था कि राजकोषीय घाटे को तथा मुद्रा पूर्ति में वृद्धि को कम किया जाए।

(II) घरेलू क्षेत्र में अपनाई जाने वाली नीतियों का उदारीकरण तथा

(III) विदेशी आर्थिक नीति में उदारीकरण करना अर्थात वस्तुओं, सेवाओं, प्रौद्योगिकी और पूँजी के अंतर्राष्ट्रीय प्रवाह पर लगाए गए नियंत्रणों को कम करना और अंततः समाप्त कर देना।

भूमंडलीकरण की ओर कदम (Steps Towards Globlisation):

भारत सरकार द्वारा भूमंडलीकरण की ओर 1991 के बाद कदम उठाए गए। भारत सरकार द्वारा उठाए गए मुख्य कदमों का उल्लेख निम्न प्रकार से करेंगे।

1. विनिमय दर समायोजन और रुपये की परिवर्तनीयता (Exchange Rate adjustment and Rupee convertibility):

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ जोड़ने के लिए उसकी मुद्रा को पूर्ण रूपेण परिवर्तनशील बना देना चाहिए। इस कदम के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि विनिमय नियंत्रणों को एक क्रमबद्ध ढंग से धीरे-धीरे कम किया जाए और अंततः पूर्णतया समाप्त कर दिया जाए। इसलिए भारत सरकार ने 1 जुलाई तथा 3 जुलाई 1991 को दो चरणों में रुपये का 18-19 प्रतिशत अवमूल्यन कर दिया। इस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा सहायता के लिए निर्धारित पहली शर्त पूरी कर ली गई।

2. आयात उदारीकरण (Import liberalisation):

1990 में प्रकाशित अपनी रिपोर्ट India: Strategy for Trade Reform में विश्व बैंक ने यह सुझाव दिया था कि आयात उदारीकरण को बड़े पैमाने पर लागू किया जाए। मुख्य सुझाव था - केवल एक नकारात्मक सूची रखी जाए और जो वस्तुएँ इस सूची में नहीं हैं उनके आयात की छूट दी जाए। सभी वस्तुओं का आयात प्रशुल्क दरों को कम किया जाए तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में पूँजीगत वस्तुओं, मध्यवर्ती वस्तुओं, कच्चे माल तथा उपभोक्ता वस्तुओं के आयात की और सुविधाएँ दी जाएँ। इन सुझावों को ध्यान में रखते हुए 1992-97 की आयात-निर्यात नीति भारत सरकार ने एक नकारात्मक सूची बनाई यानि प्रतिबंधात्मक सूची बनाई। इस सूची से बाहर की वस्तुओं का आयात किया जा सकता था। 13 अगस्त 1991 को घोषित पूरक व्यापार नीति में 20 मदों पर से इस शर्त को हटा लिया गया कि उनका आयात केवल सरकारी एजेंसियों के द्वारा ही हो सकता है। इसके अलावा, सरकार ने विभिन्न चरणों में धीरे-धीरे आयात शुल्क की अधिकतम दर को कम किया।

(3) : **विदेशी पूँजी के लिए प्रक्रियाएं (opening up to foreign capital)** : विदेशी पूंजी को आकर्षित करने के लिए तथा भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत करने के लिए भारत सरकार ने विदेशी निवेशकों के लिए द्वार खोल दिए हैं। (i) विदेशी कंपनियों को मुनाफा अपने देशों में ले जाने की छूट दी गई है (ii) विदेशी विनिमय नियमन अधिनियम के अधीन आने वाली कंपनियों को रिजर्व बैंक से अनुमति लिए बगैर उधार लेने या जमा स्वीकार करने की छूट दी गई है (iii) विदेशी विनिमय नियमन के अधिनियम के अधीन आने वाली इकाइयों को भारत में अचल संपत्ति खरीदने की छूट दी गई है, (iv) एक अनिवासी भारतीय द्वारा दूसरे अनिवासी भारतीय को शेयरों के हस्तांतरण पर प्रतिबंध हटा दिए गए हैं (v) विदेशी निवेशक अब Reserve Bank द्वारा निर्धारित कीमतों पर (Equity) इक्विटी का विनिवेश (disinvestment) करने के स्थान पर बाजार कीमतों पर विनिवेश कर सकते हैं और इस अर्जित धन को अपने देश भेज सकते हैं

(vi) संचार क्षेत्र की कुछ गतिविधियों पर 100 प्रतिशत तक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की छूट दी गई है, घरेलू निजी एयरलाइंस में विदेशी निवेश की सीमा 49 प्रतिशत तक बढ़ा दी गई है

(vii) निजी क्षेत्र के कार्यरत बैंकों में विदेशी निवेश की सीमा को बढ़ा कर 74% कर दिया गया है।

भूमंडलीकरण के प्रभाव (Effects of Globalisation):

(1) **विदेशी क्षेत्र पर प्रभाव (Effects on the External sector)** : 1991 में आरंभ की गई भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के कारण तथा औद्योगिक व अन्य नीतियों में व्यापक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप विदेशी क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं।

(1) जून 1992 में जहाँ भारत में विदेशी विनिमय भंडार मात्र 1,100 मिलियन डॉलर था, वहीं 20 मार्च 1995 को यह 20,000 मिलियन डॉलर तक पहुँच चुका था,

(2) विनिमय दर और व्यापारिक नीति में किए गए परिवर्तनों का निर्यात आय पर अच्छा प्रभाव पड़ा। 1994-95 के प्रथम दस महीनों में भी निर्यातों के डालर मूल्य में 14 प्रतिशत से अधिक की बढ़ोतरी हुई।

(3) आयात उदारीकरण की प्रक्रिया के दौरान बहुत से लोगों ने यह डर व्यक्त किया था कि इससे आयात व्यय में भारी वृद्धि होगी जिससे अर्थव्यवस्था कमजोर पड़ जाएगी। परन्तु उदारीकरण से वास्तव में हमारी आत्मनिर्भरता में वृद्धि हुई।

(4) चालू खाते में घाटा 1990-91 में सकल घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत था जो 1994-95 में कम होकर 0.5 प्रतिशत रह जाने की संभावना है।

(5) देश के प्रथम इजारा विदेशी ऋण लगभग 8,000 मिलियन डॉलर प्रतिवर्ष की गति से बढ़ रहा था।

(6) तनाव अड़चनों को सुलझाते हुए भी रुपये की विनिमय दर मजबूत बनी रही। इसके परिणामस्वरूप सरकारी व कानूनी माध्यमों से विदेशी विनिमय का आवागमन बढ़ा है जबकि पहले गैर-कानूनी व हवाला माध्यमों से काफी लेन-देन होता था; तथा

(7) भारत की क्षमताओं पर अब विदेशी निवेशकों का विश्वास बढ़ा है। इसके परिणामस्वरूप भारत में प्रत्यक्ष निवेश और पोर्टफोलियो निवेश में पिछले वर्षों में तेज वृद्धि हुई है।

1995-96 के अन्त में विदेशी मुद्रा आस्तियां (Foreign Currency assets) 17 बिलियन डालर के बराबर थीं, 1996-97 में भुगतान शेष की स्थिति में काफी सुधार हुआ और विदेशी मुद्रा भंडार में 5.8 बिलियन डालर की वृद्धि हुई। 1997-98 तथा 1998-99 में भी भुगतान शेष की स्थिति संतोषजनक रही। 1999-2000 में विदेशी मुद्रा भंडार में 6.1 बिलियन डालर की वृद्धि हुई। ~~2001-02~~ 2001-02, 2002-03 तथा 2003-04 में स्थिति और बेहतर रही क्योंकि ~~इन~~ इन तीनों वर्षों में अदृश्य मदों पर भारी आय से चालू खाते पर अधिशेष (Surplus) था।

तीन वर्षों तक लगातार अधिशेष दिखाने के बाद 2004-05 में एक बार फिर चालू खाते में घाटा हुआ यह घाटा 2.5 बिलियन डालर के बराबर था। 2006-07 में चालू खाते में घाटा 9.6 बिलियन डालर ~~का~~ था। जबकि पूंजी में आया शेष में 91.5 बिलियन डॉलर का भारी घाटा हुआ जिससे चालू खाते पर 15.7 बिलियन डॉलर का घाटा हुआ। 2008-09 में विश्व मंदी के चलते स्थिति बिगड़ गई। इस वर्ष चालू खाते में घाटा 27.9 बिलियन डालर था इसलिए विदेशी मुद्रा भंडारों में 20.1 बिलियन डालर की गिरावट हुई।

वर्ष 2009-10 में ~~भारतीय में तेजी आई~~ पश्चिमी आर्थिक अर्थव्यवस्था में तेजी आने अतिरिक्त वृद्धि के परिणामस्वरूप विदेशी निवेशकों का भारत में विश्वास बढ़ा जिससे पूंजी अन्तर्प्रवाहों में तेज वृद्धि हुई।

2010-11 में विदेशी मुद्रा भंडार में 13.1 बिलियन डालर की बढ़ोतरी हुई। 2011-12 में स्थिति काफी बिगड़ गई। इस वर्ष व्यापार में शेष घाटा 189.8 बिलियन डालर तक पहुंच गया जो सकल घरेलू उत्पाद का 10.2 प्रतिशत था।

2012-13 में व्यापार शेष में घाटा और 195.7 बिलियन डॉलर तक पहुंच गया। 2013-14 में स्थिति में काफी सुधार हुआ और चालू खाते पर घाटा केवल 32.3 बिलियन डालर रह गया। 2014-15 में चालू खाते में घाटा 26.9 बिलियन डालर था परन्तु पूंजी अन्तर्प्रवाहों में 88.3 बिलियन डॉलर की भारी वृद्धि हुई।

पूरी सुधार-अवधि को देखें तो, तीन वर्षों 1995-96, 2008-09 तथा 2011-12 को छोड़कर अन्य सभी वर्षों में विदेशी मुद्रा भंडारों में काफी वृद्धि हुई। इसके परिणामस्वरूप, विदेशी मुद्रा भंडार जो जून 1991 में मात्र 1.1 बिलियन डालर था, मार्च 2015 के अन्त में 360.2 बिलियन डालर तक पहुंच गए।

Scanned with CamScanner

(2) भारतीय उद्यमों पर प्रभाव (Effects on the Indian Enterprises):

भूमंडलीकरण ने 'असमान प्रतिस्पर्धा' को जन्म दिया है। यह प्रतिस्पर्धा है 'शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय निगमों और 'कमजोर भारतीय उद्यमों' के बीच। वस्तुतः भारत की बड़ी औद्योगिक इकाइयाँ भी विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों की तुलना में बहुत छोटी और बौनी हैं। पश्चिम बंगाल के एक संसद सदस्य ने कहा कि भारत के भूमंडलीकरण का अर्थ है 'हाथियों के झुंड में एक चूहे का घुसना'। बलदेव राज नय्यर के अनुसार, असमान प्रतिस्पर्धा के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:

(1) भारतीय उद्यम 'आकार में बहुराष्ट्रीय निगमों की तुलना में बहुत छोटे हैं।

(2) 1991 से पूर्व चार दशक तक भारतीय निगम क्षेत्र अत्यंत संरक्षणवादी माहौल में काम करता रहा। आयातों पर भारी नियंत्रण रहा, शुल्क दरों में बढ़ोतरी थी जिससे विदेशी प्रतिस्पर्धा का खतरा नहीं था। भारत सरकार की औद्योगिक लाइसेंसिंग के परिणामस्वरूप व्यापारिक घरानों ने कई अलग-अलग क्षेत्रों व उत्पादों में अपने साम्राज्यों का आवंटन किया। इसके परिणामस्वरूप एक विशृंखल एवं अक्षम औद्योगिक ढाँचे का निर्माण हुआ जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में थोड़ी-थोड़ी क्षमताओं की स्थापना की गई। पुरानी प्रौद्योगिकी का प्रयोग हुआ। बिक्री पोषित बाजार के लिए राज्य पर निर्भर होना पड़ा, तथा प्रत्येक क्षेत्र में नियंत्रण का बोलबाला रहा। ऐसी स्थिति में औद्योगिक क्षेत्र विदेशी बहुराष्ट्रीय निगमों से प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम नहीं था।

(3) भारतीय उद्यमों के लिए पूँजी की लागत बहुराष्ट्रीय निगमों की तुलना में बहुत अधिक है। इसका कारण यह है कि भारत में वास्तविक ब्याज दर दूसरे देशों में पाई जाने वाली ब्याज दरों की तुलना में बहुत अधिक है।

(4) अपनी अत्यधिक शक्तिशाली वित्तीय शक्ति के कारण, बहुराष्ट्रीय निगम न केवल भारतीय उद्यमों की तुलना में किसी उत्पादन क्षेत्र में अधिक लम्बे समय तक हानि बर्दाश्त कर सकते हैं, बल्कि वे भारतीय उद्यमियों को उनके उपयोग के स्थापित उद्यमों से आसानी से बाहर कर सकते हैं और उद्यमों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं। वस्तुतः वे जिस भारतीय उद्यम को चाहें खरीद सकते हैं।

(5) भारतीय उद्यम अभी भी पहले के नियमों से जकड़े हुए हैं। उदाहरणार्थ वे पुनःसंरचना करके श्रमिकों को आसानी से निकाल नहीं सकते ~~हैं और उद्यमों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं क्योंकि~~ क्योंकि श्रम कानून इसकी इजाजत नहीं देते। इसके विपरीत बहुराष्ट्रीय निगम नए उद्यमों को बेहतर प्रौद्योगिकी और कम श्रम-शक्ति की सहायता से स्थापित कर रहे हैं।

Scanned with CamScanner

(6) देश में उत्पादित कई वस्तुओं पर अत्यधिक ऊँचा और कुल करों पर परोक्ष कर लगाए जाते हैं जबकि इन्हीं वस्तुओं के आयातों पर इस प्रकार के कर नहीं हैं इससे भारतीय उद्योगों को प्रतिस्पर्धा करने में कठिनाई होती है इसके अलावा सरकार ने लघु क्षेत्र के लिए आरक्षित कुछ क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय निगमों को उत्पादन करने की छूट दी है जबकि इन क्षेत्रों में बड़ी भारतीय कंपनियों को उत्पादन करने की अनुमति नहीं है अतः हम कह सकते हैं कि सरकार भारतीय उद्योग के हितों के प्रति पूर्णतया सचेत नहीं है

(7) कुछ क्षेत्रों में भारत सरकार की नीतियों में खुले रूप से बहुराष्ट्रीय निगमों के साथ पक्षपात किया गया है उन्हें करों में ऐसी छूट दी गई है जो भारतीय उद्यमियों को नहीं दिया गया है जैसे: विद्युत क्षेत्र में उनकी परियोजना के लिए Counter guarantee की व्यवस्था की गई है जबकि भारतीय उद्यमियों को यह सुविधा नहीं दी गई है, बहुराष्ट्रीय निगम 100% सहयोगी कंपनियां खोल सकते हैं जबकि भारतीय उद्यमियों को अधिग्रहण (takeover) अधिनियम केवल सीमित मात्रा में ही शेयरों की वापसी खरीद की अनुमति देता है

अतः उपर्युक्त तथ्य से स्पष्ट है कि 1991 में अपनाई गई उदारीकरण की नीतियों ने एक पूर्ण तथा एक नई व्यवस्था को जन्म दिया है जिसके अधीन न केवल विदेशी पूंजी का काफी बड़ी मात्रा में अन्तर्प्रवाह हुआ अपितु जिसमें भारतीय घरेलू उद्यमियों ने स्वयं को पहली बार विदेशी निवेश का लाभ न पाकर (विदेशी निवेशकों का निशाना महसूस किया)

P.G. 2nd Semester:

DR KUMARI MANJU
H.O.D.
DEPTT OF ECONOMICS

TOPIC: WORLD TRADE ORGANISATION

W.T.O and its impacts in Indian Economy:

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को दूसरे महायुद्ध के बाद बहुत से राष्ट्रों ने मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रसार करने के लिए प्रयास शुरू किया 1947 में 23 देशों ने प्रमुख एवं आयात-निर्यात सामान्य समझौते (General Agreement on Tariffs and Trade) पर हस्ताक्षर किए। भारत GATT के संस्थापक सदस्यों में एक था GATT की मूल धारणा most favoured nation (MFN) थी जिसमें यह कहा गया कि अगर कोई देश किसी अन्य देश में उत्पादित किसी भी वस्तु को कोई लाभ, समर्थन या सुविधा प्राप्त करता है तो यह लाभ समर्थन या सुविधा स्वतः और तुरंत इन वस्तु के उत्पादक अन्य सदस्य देशों को बिना शर्त प्राप्त हो जाएगी।

WTO एक स्थायी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है और इसका मुख्य कार्य यह निश्चित करना है कि वस्तुओं का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, सेवाओं का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, विदेशी निवेश, बौद्धिक संपदा अधिकार आदि निश्चित नियमों के आधार पर निर्धारित हो।

भारत और विश्वव्यापार संगठन (India and W.T.O)

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में सर्वाधिक बहस का मुद्दा यह रहा है कि WTO का विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था पर तथा उनकी आर्थिक नीतियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। WTO के समर्थक और विकसित देशों के प्रतिनिधि WTO के संभावित लाभों का बढ़ा-चढ़ा कर लेखा-जोखा प्रस्तुत कर रहे हैं और यह तर्क है कि इससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का निर्बाध प्रसार होगा और इस प्रसार से विश्व आय स्तरों में वृद्धि होगी, उदारीकरण की गति तेज होगी, बाजार-संभावनाओं का विस्तार होगा जिससे निर्यात अवसर बढ़ेंगे तथा व्यापार संबंधी जानकारी के खुलेपन से अनिश्चितता के माहौल में कमी आएगी।

Impact of India:

1. विश्व बैंक, आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) तथा GATT के अनुसार ~~[illegible]~~ उरुग्वे (Uruguay) दौर में किए गए समझौते के ~~अनुसार~~ परिणामस्वरूप विश्व आय में प्रतिवर्ष 213 से 274 बिलियन डालर की संभावना थी। GATT का अनुमान है कि इन समझौते के परिणामस्वरूप विदेश व्यापार में ~~[illegible]~~ सर्वाधिक वृद्धि कपड़े के क्षेत्र में, कृषि, वन सामग्री एवं मछली उत्पादन के क्षेत्र में तथा परिष्कृत खाद्य सामग्री में होने की संभावना है। भारत सरकार का तर्क है कि क्योंकि भारत सरकार को इन तीन वस्तु समूहों ~~में~~ में तुलनात्मक लाभ प्राप्त है इसलिए विश्व व्यापार में प्रसार का भारत की निर्यात आय पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा और उसमें वृद्धि होगी। यह मान्यता लेने पर कि विश्व व्यापार में प्रसार का भारत में हिस्सा बढ़कर 1 प्रतिशत हो जाता है तथा इस व्यापार प्रसार से पैदा होने वाली संभावनाओं का लाभ उठा पाने में सफल हो जाते हैं तो भारत को प्रतिवर्ष 2.70

मिलियन डॉलर की अतिरिक्त निर्यात आय प्राप्त हो सकती है। कुछ अन्य अनुमानों में प्रतिवर्ष 3.50 से 7.0 बिलियन डालर की अतिरिक्त निर्यात आय की संभावना व्यक्त की गई।

मुचकुंद दुबे के अनुसार, ये सारे अनुमान गलत हैं। पहली बात तो यह है कि GATT द्वारा विदेशी व्यापार में वृद्धि का जो अनुमान लगाया गया है वह अवास्तविक है और उसे प्राप्त नहीं किया जा सकेगा। दूसरी बात यह है कि विश्व व्यापार में वृद्धि केवल व्यापार उदारीकरण पर ही निर्भर नहीं करती परन्तु कई अन्य बातों पर भी निर्भर करती है जैसे कि वस्तुओं की गुणवत्ता, निर्यात उत्पादन के लिए उचित आधारिक संरचना की उपलब्धि, निर्यात उत्पादों की आपूर्ति, प्रौद्योगिकी का स्तर इत्यादि। इन सब कारकों में भारत की सापेक्षिक स्थिति विकसित देशों की तुलना में काफी कमजोर है। इतना ही नहीं आर्थिक व राजनैतिक अनिश्चितता से भरे विश्व में भविष्य के लिए निर्यातों के अनुमान लगाना अपने आप में एक विवादास्पद प्रयास है।

(2) WTO के विशेषज्ञों का मानना है कि 2005 में बहु-फाइबर समझौते (Multi-Fibre Arrangement) के समाप्त होने से उन्हें विकसित देशों का एक बहुत बड़ा बाजार मिल जाएगा परन्तु इस संदर्भ में इस बात पर ध्यान देना जरूरी है कि MFA खत्म करने के लिए जो चरणबद्ध कार्यक्रम तैयार किया गया उसमें ऐसी व्यवस्था रखी गई थी कि कोटे का 49 प्रतिशत अंतिम वर्ष (अर्थात 2004-05) में ही समाप्त किया जाएगा। इस प्रकार MFA समाप्ति के लिए जो मूल 10 वर्ष की अवधि (1995-2005) निर्धारित की गई थी उसमें पहले नौ वर्षों में तो केवल 51 प्रतिशत कोटा समाप्त किए जाने और आखिरी वर्ष में 49 प्रतिशत कोटा समाप्त करने का प्रावधान रखा गया था। यह विकसित देशों की चाल थी क्योंकि इससे एक ओर तो वे कुछ वर्षों तक विकासशील देशों के कपड़ा व वस्त्र निर्यातों को रोकने में सफल हो गए तथा दूसरी ओर उन्हें इतना समय मिल गया कि वे अपने वस्त्र उद्योग को और मजबूत बना सकें। उदाहरण के लिए यूरोपीय संघ ने अपने सदस्य देशों को प्रेरण व अन्य सहायता दी ताकि वे अपने वस्त्र उद्योग का आधुनिकीकरण कर सकें।

(3) भारत के दृष्टिकोण से एक अत्यंत चिन्ता का विषय व्यापार संबद्ध बौद्धिक संपदा अधिकारों का क्षेत्र है। उरुग्वे दौर में विकसित देशों ने इन अधिकारों के संरक्षण के लिए कई कड़ी शर्तें विकासशील देशों पर थोपा है। इसका उद्देश्य विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों का

Scanned with CamScanner

लाभ पहुँचाना है। भारत के 1970 के पेटेन्ट Act के अधीन औषधियों पर केवल प्रक्रिया पेटेन्ट लेने की जरूरत होती थी अर्थात किसी भी भारतीय कंपनी के लिए इतना काफी था कि वह कोई औषधि बनाने की अपनी प्रक्रिया या नीति विकसित करे और फिर उस पर पेटेन्ट ले ले यह जरूरी नहीं था कि वह औषधि का स्वयं खोज या अन्वेषण करे। परन्तु अब उत्पाद पेटेन्ट लागू होने पर औषधियों का उत्पादन वही कंपनियाँ कर पायेंगी जिन्हें उनका उत्पाद पेटेन्ट प्राप्त है क्योंकि उत्पाद पेटेन्ट अधिकतर विकसित देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पास हैं इसलिए इसका अर्थ यह होगा कि यही कंपनियां उत्पाद पेटेन्ट वाली औषधियों का उत्पादन कर सकेंगी।

इससे भी अधिक चिन्ता कृषि क्षेत्र में ले पनपी है। भारत में बीज उत्पादन और पौधों के प्रजनन सम्बन्धी अनुसंधान सरकारी एजेंसियों द्वारा किए जाते हैं। इन अनुसंधानों द्वारा परिष्कृत बीजों का वितरण केन्द्र व राज्यों के बीज निगमों द्वारा किया जाता है। इसका कारण यह है कि भारत एक विकासशील देश है इसलिए यह सरकार की जिम्मेदारी बनती है कि वह सस्ती कीमतों पर किसानों को अच्छी किस्म के बीजों की उपलब्ध कराये। सरकार का उद्देश्य लाभ कमाना नहीं बल्कि एक ओर तो ग्रामीण जनता को आय के उचित साधन उपलब्ध कराना है तथा दूसरी ओर खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है पौधों की प्रजातियों पर पेटेन्ट मिल जाने से यह सारा लाभ ~~बहुराष्ट्र~~ बहुराष्ट्रीय निगमों को मिल जायगा। क्योंकि इन निगमों के पास असीमित वित्तीय स्रोत हैं इसलिए वे पौधों की सभी नई-प्रजातियों पर पेटेन्ट प्राप्त करने में सफल हो जायेंगे। सुमन सहाय के शब्दों में "व्यावसायिक अनुसंधान के लिए ~~जितनी~~ आवश्यकता कोई जनता के लिए होती है उतनी ही आवश्यकता धन के लिए भी होती है ज्यादा धन का अर्थ है पौधों के प्रजनन व बीज अनुसंधान पर ज्यादा साधनों का निवेश और इसका अर्थ है बाजार में जल्दी व तेज गति से बाजार में नई किस्मों की आपूर्ति।"

मुचकुंद दुबे ने यह तर्क देते हुए कहा है कि हालांकि विकसित देश मुक्त व खुली व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में की दुहाई देते रहते हैं परन्तु वे खुद संरक्षणात्मक नीतियाँ अपनाते हैं। बौद्धिक संपदा अधिकारों के संरक्षण ~~प्रणाली~~ प्रणाली अपने आप में मुक्त व्यापार में बाधक है और प्रतिस्पर्धा व उदारीकरण की भावना के विपरीत है अगर ये संरक्षणात्मक नीतियों का हिस्सा नहीं तो और क्या हैं।

(4) जहाँ तक व्यापार संबद्ध निवेश उपायों का संबंध है वे भी विकसित देशों के हितों को ध्यान में रखकर बनाए गए हैं। विकासशील देशों के दृष्टिकोण से TRIMs को संतुलित बनाने का तरीका यह होना चाहिए था कि विदेशी निवेशकों के प्रतिबंधात्मक व्यावसायिक व्यवहार पर अंकुश लगाने के लिए कुछ कदम उठाए जाते। परन्तु इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर TRIMs समझौता पूरी तरह से खामोश है। TRIMs समझौते के उल्लंघन की अनुमति

विकासशील देशों को केवल भुगतान शेष में असंतुलन होने की स्थिति में दी गयी है, परन्तु जैसे ही संतुलन प्राप्त हो जाता है वैसे ही उल्लंघन करने वाले उपायों को वापिस लेना होगा चाहे देश के अन्य महत्वपूर्ण प्रोजेक्टों व अन्य आर्थिक आयासों पर उनकी आवश्यकता महसूस की जा रही हो।

(5) WTO के समझौतों के अधीन सेवा क्षेत्र को भी खोलने की व्यवस्था की गयी है, सेवा क्षेत्र में बहुत-सी आर्थिक गतिविधियाँ आ जाती हैं जैसे बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार इत्यादि। इन सभी क्षेत्रों के खोलने पर विकसित देशों को विकासशील देशों की तुलना में, कहीं ज्यादा लाभ प्राप्त होंगे। इसके अलावा जैसे-जैसे विदेशी निवेशकों का विकासशील देशों के सेवा क्षेत्र में हस्तक्षेप बढ़ता जायगा उनकी आय भी बढ़ती जायेगी और विकासशील देशों को लाभ, ब्याज, रायल्टी इत्यादि के रूप में विदेशी विनिमय का काफी भुगतान करना पड़ेगा जिससे विदेशी मुद्रा संकट की स्थिति आ सकती है।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि आगे आने वाले समय में WTO के तत्वाधान में विकसित देशों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ प्राप्त होंगे साथ ही एक अन्य बात यह है कि बहुत सारे मुद्दे जिन पर निर्णय पहले सरकारों द्वारा लिए जाते थे अब नई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के तहत उनपर निर्णय WTO द्वारा लिए जायेंगे। चाहे व्यापार संबद्ध बौद्धिक सम्पदा का प्रश्न हो या व्यापार संबद्ध निवेश उपायों का प्रश्न या सेवा क्षेत्र के विभिन्न उपक्षेत्रों का प्रश्न हो, या सार्वजनिक वित्त प्रबन्धन का प्रश्न हो या और भी कोई अन्य आर्थिक गतिविधि हो, अब WTO का प्रभाव सब नीतियों पर दिखायी देगा। एस. पी. शुक्ला ने कहा है WTO के हस्तक्षेप भी WTO के कार्यक्षेत्र में शामिल किए जाएँ जैसे श्रम मानदंड, बाल श्रम, पर्यावरण की सुरक्षा आदि। विकासशील देशों में श्रम मानदंड थोपने का प्रयास इसलिए नहीं किया जा रहा है क्योंकि विकसित देशों के उत्पादकों को भय है कि विकासशील देशों में श्रम सस्ता होने से उनकी श्रम-प्रधान वस्तुओं में उत्पादन लागत कम होगी। ऐसी स्थिति में विकसित देशों के उत्पादक अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में श्रम प्रधान वस्तुओं की बिक्री के लिए विकासशील देशों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर पायेंगे। जहाँ तक बाल श्रम का सम्बन्ध है विकसित देशों का इस क्षेत्र में विकासशील देशों पर दबाव भी गलत है। पहली बात तो यह है कि बहुत से विकसित देशों में भी बाल श्रम पाया जाता है, दूसरी बात यह है कि बाल श्रम विकासशील देशों की मजबूरी है। अगर इन देशों में गरीब परिवार के बच्चे काम न करें तो उनकी स्थिति और भी दयनीय हो जाती है। एवं बच्चे तक मजबूरन अपराध की ओर बढ़ेंगे या असामाजिक कार्य करने के लिए मजबूर होंगे।

WTO अब अपने अस्तित्व के 24 वर्ष पूर्ण कर चुके हैं। इन वर्षों के अनुभव से पता चलता है कि हालांकि सभी देशों को समान अधिकार प्राप्त हैं तथापि विकसित देशों का बोलबाला है। समानता की बातें पन्नों पर होती है। सभी विवादों का निदान मुक्त आपस के किन्हीं आदर्श सिद्धान्तों के आधार पर नहीं होता अपितु इस बात से होता है कि ताकतवर कौन है तथा किसकी सौदाशक्ति सबसे ज्यादा है। स्पष्ट है कि विवादों में अंतिम जीत विकसित देशों की ही होती है। सारे मूल समझौते और सभी संशोधन विकसित देशों की ही होती है। सारे मूल समझौते और सभी संशोधन विकसित देशों के पक्ष में किए गए हैं। WTO के विवाद निपटान प्रक्रिया केवल दो बराबर शक्तिशाली राष्ट्रों के बीच विवादों का निपटान करने के लिए ही उपयुक्त है। इसका कारण यह है कि दो राष्ट्रों A और B के बीच झगड़े में WTO राष्ट्र A के पक्ष में फैसला देता है परन्तु B उस फैसले के अनुसार अपनी नीति में परिवर्तन नहीं करता तो WTO राष्ट्र A को ही यह अधिकार दे सकता है कि वह भी प्रतिकार करे अर्थात बदले की कार्यवाही करे। परन्तु राष्ट्र A यह कार्यवाही तभी कर पायेगा यदि वह राष्ट्र B के बराबर शक्तिशाली है अन्यथा चुपचाप बैठ जायेगा। स्पष्ट है कि अधिकतर विकासशील देश विकसित देशों के खिलाफ बदले की कार्यवाही नहीं कर पायेंगे और चुप रहने में ही अपनी भलाई समझेंगे। यही कारण है कि पिछले डेढ़ दशक से WTO का इतिहास रहा कि विकसित देश विशेष रूप से अमरीका विकासशील देशों पर बुरी तरह से हावी रहा है।